हस्तक्षेप

अनारक्षितों को आरक्षण
कितना सफल, कितना विफल?

www.samaylive.com
राष्ट्रीय सहारा
नई दिल्ली। शनिवार ● 12 जनवरी ● 2019
hastkshep.rsahara@gmail.com

विफल लोकतंत्र का प्रसादवाद

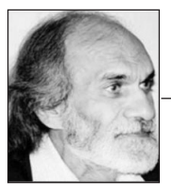

■ विभांशु दिव्याल
वरिष्ठ लेखक एवं पत्रकार

पचास प्रतिशत अनारक्षित में से आठ लाख रुपये तक की सालाना आय वाले 'निर्धनपिछड़े वर्ग' को दस प्रतिशत अर्थोन्नायक आरक्षण देने वाला भाजपा का सरकारी विधेयक विपक्ष के परन्तुकमय समर्थन से दो तिहाई से कहीं बहुत ज्यादा बहुमत के साथ लोक सभा और राज्य सभा दोनों सदनों से सकुशल पारित होकर संविधान में शामिल होने की राह पर है। जिन्हें विधेयक की जय-जयकारी प्रशंसा करनी थी, वे हर्षोन्माद के साथ प्रशंसा कर चुके हैं, और जिन्हें अपने समर्थन के बावजूद इसमें खोट-खामियां निकालनी थीं, वे अपने हाऱ्हाकारी अंदाज में इसकी लानत-मलामत भी कर चुके हैं। आगामी चुनाव की दुंदभि बेला में इसके आगमन काल को विपक्ष भले ही 'नीयत में खोट' का नाम दे लेकिन चुनावी पंडित इसे भाजपा का 'मास्टर स्ट्रोक' मान रहे हैं। उनका मानना है कि हिंदी क्षेत्र के विधानसभा चुनाव में जिस सवर्ण मतदाता ने भाजपा से छिटक कर उसे पटकनी दी थी, वह मतदाता पटकनी परिधि से बाहर निकल कर पुनः भाजपा के पक्ष में आकर खड़ा हो जाएगा। कुछ पंडित पूर्व उदाहरणों के साथ यह भी सिद्ध करने में लगे हैं कि भाजपा को इससे वैसा चुनावी लाभ नहीं मिलेगा जैसा कि वह आकलित कर रही है।

विपक्ष को समर्थन की मजबूरी में डालने वाला यह विधेयक वस्तुतः कितनों को आर्थिक रूप से आरक्षित करेगा, करेगा भी या नहीं करेगा, इस पर भी विद्वजन अपनी-अपनी तर्कावलियों का प्रकाशन कर चुके हैं। चिंतक-विचारक यह भविष्यवाणी कर चुके हैं कि इसके बाद जातीय आरक्षण की नई-नई मांगें उठेंगी, जैसी कि एक मांग पिछड़ों के वर्तमान 27ः आरक्षण को बढ़ाकर 52-54ः तक ले जाने के लिए उठ भी चुकी है। इसके प्रभावी-निष्प्रभावी होने की समीक्षाओं-आलोचनाओं का दौर चल रहा है, और कुछ समय तक और चलेगा। क्योंकि भाजपा आम चुनाव तक 'आर्थिक न्याय की ओर बढ़े अपने इस बड़े कदम' को जिंदा रखने की कोशिश करेगी, इसलिए विपक्ष भाजपा को इससे लाभान्वित न होने देने की भरपूर कोशिश में जुटेगा। मतलब यह कि आगामी चुनावों तक यह चर्चा में बना रहेगा। कुल मिलाकर इस विधेयक पर सारी बहस यहीं ठंडी पड़ जाएगी जिस तरह कर्जमाफी को लेकर जो बहस उठी थी, वह ठंडी पड़ गई है।

लुभाऊ-ललचाऊ-भरमाऊ प्रसादवाद का सहारा

स्थापित तौर पर यह मान लिया गया है कि भारत का चुनावी लोकतंत्र सरकार या सरकारों के इसी तरह के लोकप्रियतावादी यानी लुभाऊ-ललचाऊ-भरमाऊ प्रसादवाद के सहारे चलता आ रहा है, आगे भी इसी तरह चलता रहेगा। नये-नये हित-समूहों की 'स्वहित' की नई-नई मांगें उठती रहेंगी और सरकारों पर दबाव बनाती रहेंगी। किसी भी सरकार में इतनी हिम्मत नहीं होगी कि किसी भी हित-समूह की किसी भी ऐसी मांग की ज्यादा देर तक उपेक्षा कर सके। कोई भी ऐसी मांग वह चाहे कर्जमाफी की हो या फिर किसी समूह के लिए आरक्षण की, क्योंकि किसी न किसी राजनीतिक दल की गोदी में बैठी होती है, इसलिए वह तब तक गोदी से नहीं उतरती जब तक कि वह अपने हिस्से का प्रसाद न पा ले। पुष्टि के लिए अब तक की परंपरा का अवलोकन किया जा सकता है।

आरक्षण के प्रसाद का संकट यह है कि चुनावी राजनीति बहुत ही धूर्ततापूर्ण शैली में इस प्रसाद को ही जीवनसाधक समाधान बनाकर प्रस्तुत कर रही है। उसने इस प्रसाद को ही सत्ता की एकमात्र सीढ़ी बना दिया है

यह प्रसादवाद अब चुनावी राजनीति का सर्वस्वीकृत और दृढ़-स्थापित तत्व है, जो पूरी गति के साथ आगे भी बढ़ रहा है, और मोटा-तगड़ा भी हो रहा है। कोई भी सरकार हो या कोई भी विपक्षी दल इस प्रसादवाद के आगे दंडवत होने के लिए विवश है। असली बहस इस बिंदु से शुरू होनी चाहिए। विचार इस पर होना चाहिए कि प्रसादवाद ने इस लोकतंत्र को कहां पहुंचा दिया है, और आगे कहां पहुंचाएगा। पहले प्रसादवाद को थोड़ा स्पष्ट कर दिया जाए। जब किसी मंदिर में कोई पूजा-अनुष्ठान होता है, तो अंत में पुजारी प्रसाद का थाल लेकर प्रकट होता है, भक्तों की भीड़ प्रसाद पाने के लिए ललक उठती है। प्रसाद के थाल तक पहुंचने के लिए मारामारी करने लगती है। थाल में उतने लड्डू नहीं होते कि सारी भीड़ में बंट सकें या सबका पेट भर सकें। जो अन्य को धकिया कर आगे पहुंच गया वह लड्डू पा जाता है। जो रह जाते हैं वे फिर अगले थाल का इंतजार करने लगते हैं। पुजारी भी जानता है कि सबको लड्डू नहीं मिल सकते, न सबका पेट भर सकते हैं और भीड़ भी जानती है कि लड्डू न सबको मिल सकते हैं, न सबका पेट भर सकते हैं। लेकिन दोनों अपना काम जारी रखते हैं। यही हाल आरक्षण के प्रसाद का है। जो दे रहा है वह भी जानता है कि इससे न सबकी जिंदगियां खड़ी हो सकती हैं, न सबको रोजगार मिल सकता है। जिसे दिया जा रहा है वह भी जानता है कि यह स्थायी समाधान नहीं है। लेकिन जिसे मिल गया वह खुश हो गया और जिसे न मिला वह असंतुष्ट हो गया, आक्रोशित हो गया, उत्तेजित हो गया। आरक्षण के प्रसाद का संकट यह है कि चुनावी राजनीति बहुत ही धूर्ततापूर्ण शैली में इस प्रसाद को ही जीवनसाधक समाधान बनाकर प्रस्तुत कर रही है। उसने इस प्रसाद को ही सत्ता की एकमात्र सीढ़ी बना दिया है।

प्रसादवाद का सबसे बड़ा अपराध

प्रसादवाद का सबसे बड़ा अपराध यह है कि इसने राजनीतिक दलों को गंभीर और व्यापक समस्याओं के ठोस और स्थायी समाधान खोजने की वास्तविक जिम्मेदारी से मुक्त कर दिया है। हर राजनीतिक दल जानता है कि देश की मौजूदा आर्थिक संरचना में सबको रोटी-रोजगार देने की क्षमता नहीं है। यह क्षमता पैदा करने के लिए जिस आधारभूत बदलाव की जरूरत है, वह एक कष्टसाध्य कार्य है जिसमें सबकी ईमानदार भागीदारी भी चाहिए और सबको बदलाव के दौर में होने वाले कष्टों को सहने के लिए तैयार भी रहना चाहिए। राजनीतिक दल जानते हैं कि ऐसे कार्य को संपन्न करना उनके बूते से बाहर है। अगर वे ऐसा करने की कोशिश करेंगे भी तो हित-समूह उनकी जड़ों में पलीता लगा देंगे। प्रसादवाद उन्हें इस जोखिम से सीधे-सीधे बाहर निकाल ले जाता है। क्योंकि उन्हें सत्ता चाहिए बदलाव नहीं, इसलिए प्रसादवाद उनका सबसे मौजूं हथियार है।

प्रसादवाद ने विभिन्न व्यावसायिक, जातीय और धार्मिक हित-समूहों को डरावने तौर पर स्वार्थी, सीमित और संकुचित दृष्टि वाला, सामूहिक दायित्वबोध विहीन, भ्रष्ट और लंपट बना दिया है। ये अपने सीमित और क्षुद्र हितों की पूर्ति के लिए किसी भी हद तक जा सकते हैं, जा रहे हैं। व्यापक और सार्विक जनहित जो क्षुद्र पहचानों की परिधि से बाहर होते हैं इन हित-समूहों की कार्य सूची से बाहर हैं। और ये हित-समूह ही मौजूदा चुनावी राजनीति के प्रबल मोहरे हैं। हर चुनावी राजनीतिक दल इन हित समूहों को साधते रहने और इन्हें संतुष्ट करते रहने की ही राजनीति कर रहा है। विडंबना यह है कि ऐसा करने के लिए उनके पास एकमात्र प्रसादवाद ही है। निष्कर्ष यह कि इस प्रसादवाद के सहारे चाहे जो दल सत्ता में आए और चाहे जो दल सत्ता से बाहर जाए, भारतीय लोकतंत्र की मूल समस्याएं जहां की तहां रहेंगी, न व्यापक बेरोजगारी घटेगी, न हर वर्ष दो करोड़ रोजगार पैदा होंगे, न सामाजिक टकराव कम होंगे, और अगर ये टकराव कम नहीं होंगे तो कानून व्यवस्था की समस्याएं भी और अधिक जटिल तथा उग्र होंगी। लोकतंत्र अधिकाधिक संकटग्रस्त होता जाएगा। प्रसादवाद लोकतंत्र को विफल कर रहा है। पिछले दिनों जिस तरह सभी दल सवर्ण आरक्षण विधेयक के समर्थन में आगे आए, वह प्रसादवाद का चरम था, और इस बात का स्पष्ट संकेत भी कि देश को गर्त में धकेलने के लिए सभी राजनीतिक दल किस तरह एकजुट हैं। ■

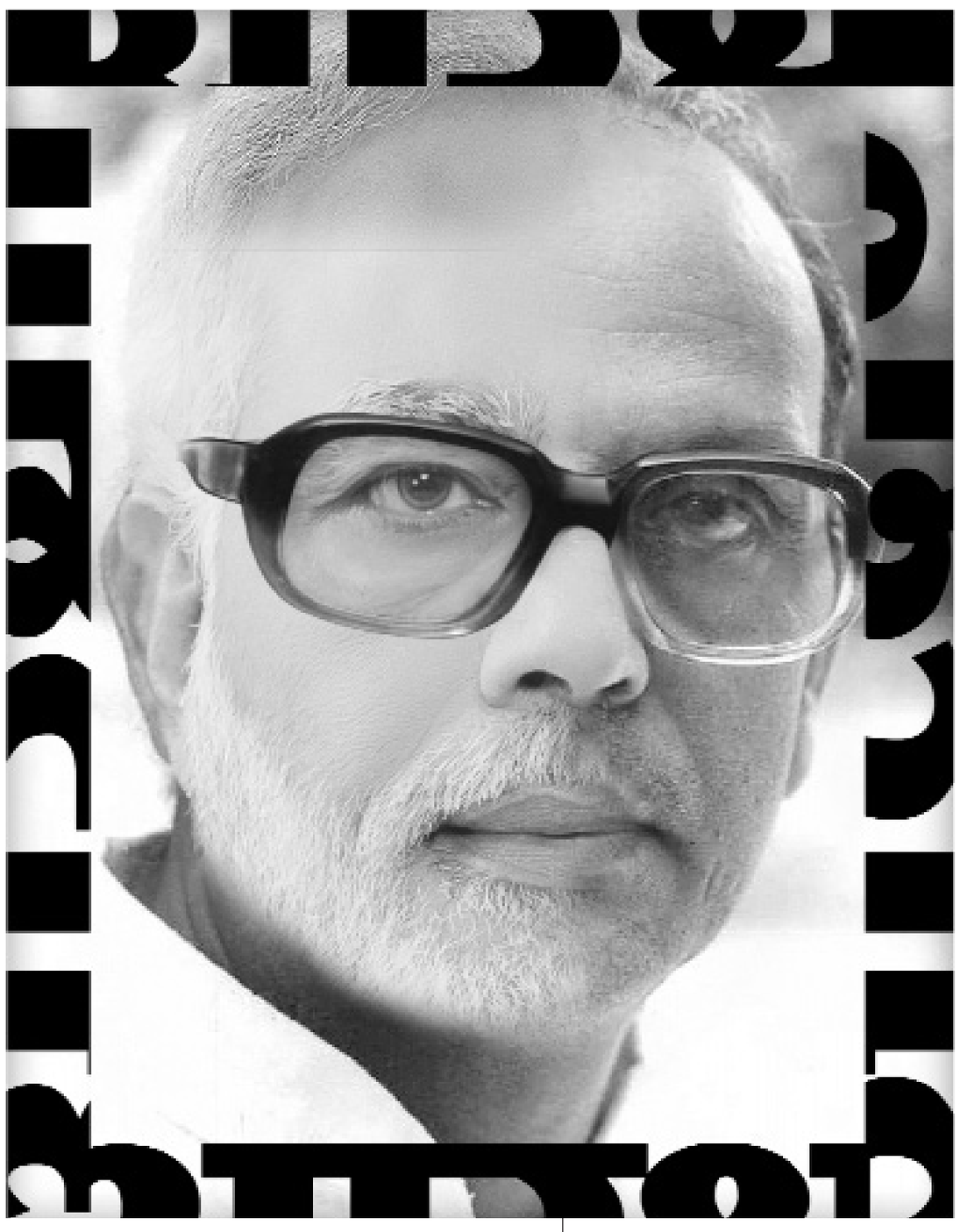

इलस्ट्रेशन : जे.पी. त्रिपाठी

गेमचेंजर भले न हो

■ प्रमोद जोशी
वरिष्ठ पत्रकार

आर्थिक आधार पर 10 फीसदी आरक्षण सुनिश्चित करने वाला संविधान संशोधन विधेयक संसद में जितनी तेजी से पास हुआ, उसकी कल्पना तीन दिन पहले किसी को नहीं थी। कांग्रेस समेत दूसरे विरोधी दलों ने इस आरक्षण को लेकर सरकार की आलोचना की पर इसे पास करने में मदद भी की। यह विधेयक कुछ उसी अंदाज में पास हुआ, जैसे अगस्त, 2013 में खाद्य सुरक्षा विधेयक पास हुआ था। लेफ्ट से राइट तक के पक्ष-विपक्ष में उसे गले लगाने की ऐसी होड़ लगी जैसे अपना बच्चा हो। आलोचना की भी तो ईर्ष्या भाव से, जैसे दुश्मन ले गया जलेबी का थाल। तकरीबन हरेक दल ने इसे 'चुनाव सुरक्षा विधेयक' मानकर ही अपने विचार व्यक्त किए।

तकरीबन वैसा ही यह 124वां संविधान संशोधन 'चुनाव आरक्षण विधेयक' साबित हुआ। भारतीय राजनीति किस कदर गरीबों की हितैषी है, इसका पता ऐसे मौकों पर लगता है। चुनाव करीब हों, तो खास तौर से। राज्य सभा में जब यह विधेयक पास हो रहा था, तब कानून मंत्री रविशंकर प्रसाद ने विरोधियों पर तंज मारा, 'आप इसे लाने के समय पर सवाल उठा रहे हैं, तो मैं बता दूं कि क्रिकेट में छक्का स्लॉग ओवर में लगता है। आपको इसी पर परेशानी है तो यह पहला छक्का नहीं है। और भी छक्के आने वाले हैं।'

क्या कहानी बदलेगी?

इस छक्केबाजी से क्या राजनीति की कहानी बदलेगी? क्या बीजेपी की आस्तीन में कुछ और नाटकीय घोषणाएं छिपी हैं? सच यह है कि भूमि अधिग्रहण और खाद्य सुरक्षा विधेयक 2014 के चुनाव में कांग्रेस को कुछ दे नहीं पाए, बल्कि पार्टी को इतिहास की सबसे बड़ी हार हाथ लगी। कांग्रेस उस दौर में विलेन और मोदी नये नैरेटिव के नायक बनकर उभरे थे। पर इस बार कहानी बदली हुई है। इसीलिए सवाल है कि मोदी सरकार के वादों पर जनता भरोसा करेगी भी या नहीं? पार्टी की राजनीतिक दिशा का संकेत इस आरक्षण विधेयक से जरूर मिला है पर प्रसाद ने जिन शेष छक्कों की बात कही है, उन्हें लेकर अभी कयास हैं। ज्यादा समय नहीं बचा है, पर संभव है जिस तरह से पिछली सरकार ने अपने अंतरिम बजट में 'वन रैंक, वन पेंशन' स्कीम की घोषणा की थी, उसी तरह की घोषणाएं हों। संसद का बजट सत्र 31 से 13 फरवरी तक चलने की खबर है। वित्त मंत्री 1 फरवरी को अंतरिम बजट पेश करेंगे। यह इस लोक सभा का आखिरी संसद सत्र होगा। लोकलुभावन घोषणाओं के लिए यही मौका बचा है। चुनाव के साल में अंतरिम बजट में सीमित समय के लिए जरूरी सरकारी खर्च की अनुमति होती है, और बाद में नई सरकार पूरा बजट पेश करती है।

लोकलुभावन वादे

अनुमान है कि सरकार शायद सार्वभौमिक बेसिक आय स्कीम की घोषणा करे। सन् 2017 के आर्थिक सर्वे में सरकार से सिफारिश की गई थी कि हरेक नागरिक की हर महीने एक तयशुदा आमदनी सुनिश्चित करने के लिए 'यूनिवर्सल बेसिक इनकम स्कीम' बनाई जाए। पिछले कुछ साल से सरकार सब्सिडी की रकम को व्यक्ति के खाते में डालने का प्रयास कर रही है। क्यों न उसे निश्चित आय की शक्ल दी जाए? 'आधार' और 'जनधन' योजना इसी दिशा में उठाए गए कदम हैं। गरीबी की रेखा के नीचे के लोगों के लिए ऐसी योजना लागू हो सकती है। इसमें मनरेगा को भी शामिल किया जा सकता है। मनरेगा भी लोगों की आय बढ़ाने का जरिया है। मध्य प्रदेश की एक पंचायत में पायलट प्रोजेक्ट के तौर पर ऐसी स्कीम को लागू करके देखा भी गया है। बीजेपी इन दिनों विभिन्न सरकारी कार्यक्रमों से लोगों को मिले लाभ का हिसाब लगा रही है। मसलन, स्किल इंडिया, मुद्रा योजना, उज्ज्वला और सौभाग्य योजना से जिन लोगों को लाभ मिला है, उनसे व्यक्तिगत संपर्क करके वोट देने की अपील की जाएगी।

मोदी सरकार आरक्षण संबंधी फैसले का पूरा माइलेज लेना चाहती है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि सवर्ण हिंदू जातियों के बीच पार्टी का जनाधार हाल में कमजोर हो रहा था। पिछले दिनों अजा/जजा एक्ट में संशोधन के कारण यह वर्ग पार्टी से नाराज था

समय महत्त्वपूर्ण

आरक्षण संबंधी प्रस्ताव का समय महत्त्वपूर्ण है। सरकार इस फैसले का पूरा माइलेज लेना चाहती है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि सवर्ण हिंदू जातियों के बीच पार्टी का जनाधार हाल में कमजोर हो रहा था। पिछले दिनों अजा/जजा एक्ट में संशोधन के कारण यह वर्ग पार्टी से नाराज था। मध्य प्रदेश के चुनाव में इसका असर खास तौर से देखने को मिला। शायद सरकार का यह फैसला इसी रोष को कम करने लिए है। यह आर्थिक रूप से कमजोर तबके के नाम पर है। इसके लाभार्थी केवल सवर्ण नहीं सभी तबकों के लोग हैं। इसलिए इसे 'सबका साथ' के साथ जोड़ा जा सकता है। इस बहाने आरक्षण पर बहस भी चल निकलेगी। फिर भी कहना मुश्किल है कि इससे भाजपा के पक्ष में लहरें पैदा होंगी या नहीं। तकरीबन हरेक पार्टी ने इसे समर्थन दिया है। हालांकि मोदी विरोधी मानते हैं कि यह चुनावी चाल है, पर वे इसका विरोध करने की स्थिति में नहीं हैं। अलबत्ता, राफेल के हवाई हमलों से घिरी भाजपा को कुछ देर के लिए राहत जरूर मिलेगी। वह राजनीतिक विमर्श को अपनी तरफ खींचने में कामयाब हुई है। यदि इस बीच उसने कुछ और घोषणाएं कीं, तो बहस का रुख बदलेगा। साथ ही, आरक्षण के सवाल को जातीय घेराबंदी के बाहर निकालने में भी उसे सफलता मिली है। यह एक नयापन है, जो इस चुनाव में विमर्श का बिन्दु बन सकता है।

कानूनी दिक्कतें

इस आरक्षण की राह में कुछ कानूनी दिक्कतें भी हैं, इसलिए सरकार ने संविधान संशोधन का रास्ता पकड़ा है। कुछ विधि विशेषज्ञ मानते हैं कि इसे अदालत की मंजूरी नहीं मिलेगी। यह राय सन् 1992 के इंदरा साहनी वाले मामले के कारण है। उस केस में नौ जजों की संविधान पीठ ने माना था कि देश में 'आर्थिक पिछड़ापन' आरक्षण का आधार नहीं हो सकता। इसीलिए आर्थिक आधार पर आरक्षण देने के लिए संविधान के अनुच्छेद 15 और 16 में बदलाव की जरूरत महसूस की गई। इस आरक्षण के रास्ते में दूसरी बाधा है इसका 50 फीसदी की

शेष पृष्ठ दो पर

10% आरक्षण

सामान्य वर्ग के कमजोर तबकों के लिए 10% आरक्षण की व्यवस्था मोदी सरकार ने की है। एक नजर अब तक इस दिशा में हुई कवायद पर :

- सिन्हो कमीशन (कमीशन टू एग्जामिन सब-कैटेगोराइजेशन ऑफ ओबीसी) ने 2004 से 2010 तक इस बारे में काम किया और 2010 में तत्कालीन सरकार को प्रतिवेदन दिया। मोदी सरकार ने इसी कमीशन की सिफारिश के आधार पर संविधान संशोधन बिल तैयार किया
- इसके पूर्व 21 बार प्राइवेट बिल लाकर अनारक्षित वर्ग के लिए आरक्षण संबंधी सुविधाएं प्रदान करने की मांग हुई
- मंडल आयोग ने भी इसकी अनुशंसा की थी
- नरसिंह राव सरकार ने 1992 में एक प्रावधान किया था पर संविधान संशोधन नहीं होने के कारण सुप्रीम कोर्ट ने इसे निरस्त कर दिया
- प्रस्तावित आरक्षण का कोटा वर्तमान कोटे से अलग होगा। अभी देश में कुल 49.5 फीसद आरक्षण है। अन्य पिछड़ा वर्ग को 27 फीसद, अनुसूचित जातियों को 15 फीसदी और अनुसूचित जनजाति को 7.5 फीसद आरक्षण की व्यवस्था
- संविधान के आर्टिकल 15 में 15.6 जोड़ा गया है, जिसके अनुसार राज्य और भारत सरकार को इस संबंध में कानून बनाने से नहीं रोका जा सकेगा
- इसके अनुसार आर्थिक रूप से दुर्बल सामान्य वर्ग को नौकरियों एवं शैक्षणिक संस्थानों में 10 फीसद आरक्षण का प्रस्ताव किया गया
- संविधान के 16 अनुच्छेद में एक बिंदु जोड़ा जाएगा जिसके अनुसार राज्य सरकार और केंद्र सरकार 10 फीसदी आरक्षण दे सकते
- गरीब सवर्णों को प्रस्तावित 10 फीसदी आरक्षण मौजूदा 50 फीसदी की सीमा से अलग होगा

आरक्षण का वर्तमान गणित

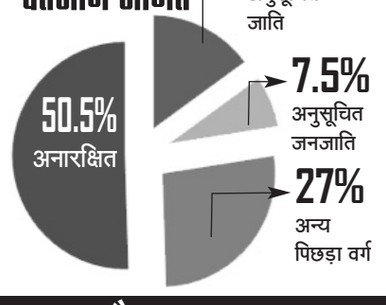

मौजूदा व्यवस्था

आंध्र प्रदेश	50% (महिलाओं को 33.33% अतिरिक्त)	झारखंड	60%
हरियाणा	70%	राजस्थान	54%
तमिलनाडु	69%	उत्तर प्रदेश	50%
महाराष्ट्र	68%	बिहार	50%
		मध्य प्रदेश	50%
		पश्चिमी बंगाल	50%

सवर्णों की अहम भूमिका

राज्य	कुल सीटें	प्रभाव	जीते
उत्तर प्रदेश	80	40	37
महाराष्ट्र	48	22-25	10
बिहार	40	20	10
कर्नाटक	28	13-15	10
गुजरात	26	12	12
मध्य प्रदेश	29	14	12
राजस्थान	25	14	14
झारखंड	14	6	4
असम	14	7	5
छत्तीसगढ़	11	7	7
उत्तराखंड	5	5	5

प्रस्तुति : विशाल तिवारी

पेज 2 फैजान मुस्तफा। प्रेमकुमार मणि। अनिल चमड़िया
पेज 3 अरुण कुमार त्रिपाठी । अवधेश कुमार । अमरेंद्र राय
पेज 4 अरविन्द मोहन । राजेंद्र शर्मा । अनिल जैन